ISSN 2350-109X
www.indianscholar.co.in

Indian Scholar

An International Multidisciplinary Research e-Journal

मुहम्मद गौरी का राजपुताना से सम्बंध
(1175 ई.-1206 ई.)
(जैसलमेर, अजमेर, रणथम्भौर, आमेर, मारवाड़, के विशेष संदर्भ में)

हेमराज चंदेल
शोध छात्र, इतिहास विभाग,
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,
कोटा (राजस्थान)

प्रो.(डॉ.) याकूब अली खान
प्रोफेसर, इतिहास विभाग,
अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय,
अलीगढ़ (उत्तर प्रदेश)

प्रो.(डॉ.), कमलेश शर्मा
प्रोफेसर, इतिहास विभाग,
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,
कोटा (राजस्थान)

सातवीं शताब्दी में इस्लाम का अभ्युदय विश्व इतिहास की एक युगांतकारी घटना थी। इसने ना केवल एक देश अथवा प्रायद्वीप वरन लगभग समस्त विश्व को प्रभावित किया। अपने पर्वतक की मृत्यु के एक सदी के अंदर ही उसने एक वृहत साम्रज्य का निर्माण कर लिया। इस कम्र में इस्लाम के अनुयायियों का अपने पड़ोसी तदुपरांत अन्य देशों पर आक्रमण हुआ। विदेशी आक्रमणों और भारत में उनकी सत्ता की स्थापना के उपरांत भी उन मुस्लिम शासकों की आक्रमणात्मक निति के विरूद्व इस देश, साथ ही राजपुताना के शासकों ने भी इनका निरन्तर सामना किया।1173-1174 ई. में गौर के सुल्तान गयासुद्दीन ने गजनी पर अधिकार कर अपने छोटे भाई मुइजुद्दीन को गजनी का शासक नियुक्त किया और वही मुइजुद्दीन आगे चलकर भारत के इतिहास में मुहम्मद गौरी के के नाम से विख्यात हुआ। उसने भी महमूद गजनवी की भांति भारत पर अनेक आक्रमण किय और भारत में मुस्लिम राज्य की नींव रखी उसका पूरा नाम मुईजुद्दीन मुहम्मद बिन् साम था। मुहम्मद गौरी ने सदैव अपने बड़े भाई सुल्तान गियासुद्दीन का सम्मान किया और एक स्वंतत्र शासक की हैसियत रखते हुये भी अपने को उसके अधीन ही समझा था। इस प्रकार गजनी के प्रथम वैभवशाली राजवंश का अंत हो गया।[1]

ISSN 2350-109X
www.indianscholar.co.in
Indian Scholar
An International Multidisciplinary Research e-Journal

मुहम्मद गौरी द्वारा राजपुताना की विजय-

मुहम्मद गौरी ने अपने प्रारंभिक अभियान हेतु खैबर दरै को छोडकर उससे सुरक्षित व लधु रास्ते के लिए इस्माइल खां के पश्चिम में गोमल दर्रे को चुना[2] 1175 ई. में उसने करामतियो से मुल्तान छीन लिया[3] और फिर उच्छ पर अधिकर जमा कर फिर अलिकरभाखा की नियुति कर गजनी लौट गया।[4]

मुहम्मद गौरी और जैसलमेर:-

महमूद गजनवी के पश्चात अनेक अयोग्य व्यक्ति गजनी के सुल्तान बने, जिन्हें गजनी छोड़ कर भारत में शरण लेनी पड़ी, किन्तु वह भारत में मुसलमान साम्राज्य स्थापित करने में सफल न रहे। भारत में पंजाब से पूरब की और उनका विस्तार अवरुद्ध होने पर अशक्त गजनियो ने दक्षिण की और उत्तरी राजस्थान पर ध्यान दिया।[5] पंजाब के सूबेदार मोहम्मद भालिम ने उत्तरी राजस्थान के भाटियों एंव अन्य हिंदू राजाओं को दबाकर वहाँ अधिकार कर लिया और अपने आप को गजनी के सुल्तान से स्वतंत्र कर लिया। सन् 1120 ई. के लगभग उन्होंने नागौर पर अधिकार करके शाकम्भरी के चौहान से नागौर का किला ले लिया कुछ समय पश्चात चौहानों ने भामिल को पराजित अवश्य किया किन्तु उनका सामंत बनकर वह नागौर के किले पर अपना अधिकार यथावत बनाए रखने में सफल रहे। उनकी प्रशंसा करनी होगी कि उन्होंने ऐसे नए क्षेत्रों पर मुसलमानों का प्रभुत्व जमाया जिन्होंने पहले कभी महमूद गजनवी कि प्रभुता स्वीकार नही थी। वह अपने स्वामी,सुल्तान बहराम, के विरुद सेना लेकर भाटियों के नोखा. जांगलू, पुगल और देरावर क्षेत्रों से होते हुए मुल्तान के समीप पहुंचे, जहाँ सुल्तान ने उन्हें पराजित कर दिया। येन-केन-प्रकारेण पूरब के चौहान, प्रतिहारो और परमारो को अभी तक अपने क्षेत्रों से दूर रखने भाटी सफल रहे, और पश्चिम में अपने खडाल व चोलीस्तान क्षेत्रों पर अधिकार बनाए रखने के लिए उन्हें सिंध के अरबों और मुल्तान के तुर्को के साथ संघर्ष करके सांठ-गाँठ बैठानी पड़ी, किन्तु अब उन्हें पूरब में नागौर के नए पडौसी मुसलमानों की गतिविधियों की और सतर्क रहना पड़ रहा था।[6]

लुद्रवा[7](जैसलमेर से दस मील उत्तर-पश्चिम[8] में काकणी नदी के तट पर) के रावल बिजयराव लांझा (सन् 1127-1147ई.) ने अपने राज्यों के क्षेत्र में सिंध और पंजाब से अतिक्रमण करने वाले तुर्को के जत्थों को पराजित करके 'परम

ISSN 2350-109X
www.indianscholar.co.in
Indian Scholar
An International Multidisciplinary Research e-Journal

भट्टारक महाराजधिराज परमेश्वर' की उच्च पदवी धारण की।[9] मजेज खां और करीम खां के नेतृत्व में मोहम्मद गौरी के अग्रिम सैनिक दस्तो ने सिंध में अपने आधार स्थल नगरथटा से लुद्रवा पर धावे करने आरम्भ कर दिए।

[10] रावल ने उन्हें अनेक बार पराजित करके पीछे धकेला किन्तु वह लुद्रवा को लूटने के लिय दृढसंकल्प थे। उनके पश्चात युवराज भोजदेव (सन् 1147-1152ई.) लुद्रवा के शासक बने।

युवराज जैसल के पिता, रावल दुस्साजी ने उन्हें लुद्रवा की राजगद्दी पर बैठने के अधिकार से वंचित कर दिया था, इसलिय वह स्वेच्छा से देश त्याग कर गजनी के शासक द्वारा नियूक्त सूबेदार मुहम्मद गौरी की सेवा में चले गये। उनके छोटे भाई बिजयराज लांझा लुद्रवा की राजगद्दी बैठे। उनके बाद 1147 ई. में उनके युवराज भोजदेव लुद्रवा के शासक बने। जैसल ने लुद्रवा की राज गद्दी पर अपना जेठा जेठशी अधिकार प्राप्त करने के लिय अपने छोटे भाई के पुत्र रावल भोजदेव के विरुद मुहम्मद गौरी[11] के पास पहुंचा। व उसने जैसल को सहर्ष सहायता देने स्वीकार कर लिया। इसके कई कारण थे। सर्वप्रथम उसे ऐसा निमंत्रण अभी तक किसी भी हिंदू शासक से प्राप्त नही हुआ था। क्योंकि इस समय तक भारतीयों की मनोदशा इन तुर्को के प्रति म्लेच्छो से ज्यादा नही थी। द्वितीय- उसे मरुभूमि के राज्यों की जानकारी देने वाला सूत्र मिल गया। तृतीय सबसे महत्वपूर्ण कारण उसे अपने पूर्ववती आक्रमणकारियों द्वारा जीते गये सबसे ज्यादा धनवान प्रदेश गुजरात जाने के लिए मार्गदर्शक व सहायक भी प्राप्त हो गया। अत: उन दोनों में शीघ्र मित्रता हो गयी। मुहम्मद गौरी ने जैसल को सहायता देना स्वीकार किया व अपने सेनापति मजुज खां - करीम खां के नेतृत्व रावल भोजदेव पर सन् 1152 ई. आक्रमण किया। मुहम्मद गौरी की सेना ने लुद्रवा के किले को घेरे रखा, किन्तु रावल भोजदेव ने झुकने का नाम तक नही लिया। अन्ततः उनकी सेना ने आत्मघाती आक्रमण कर किले पर अधिकार कर लिया। नगर की धन सम्पदा को लुट कर,किले को तोड़ कर समतल कर दिया। सन् 1024ई. के पश्चात यह दूसरा अवसर था जब लुद्रवा के किले को तोड़ा गया। आततायियों ने न केवल किले को ही तोड़ा बल्कि उन्होंने सदियों से वंचित अमूल्य कला और शिल्प धरोहर, संस्कृति और संपदा को कुछ दिनों में ही नष्ट कर डाला। युवा रावल भोजदेव द्वारा प्राणोंत्सर्ग किए जाने के पश्चात सन् 1152ई. में जैसल[12]लुद्रवा की राजगद्दी पर बैठे। रावल जैसल ने रावल भोजदेव की पराजय से अनुभव किया कि युद्ध की कूटनीति व सामरिक दृष्टि से लुद्रवा राजधानी के लिए उपयुक्त स्थान नही था, इसलिय उन्होंने राजधानी के अनेक नए स्थानों का सैनिक परिवीक्षण किया और 1156 ई. में वर्तमान जैसलमेर के किले कि नींव रखी, जहाँ सन् 1162 ई. में अपनी राजधानी ले गए। उनके समय में चौहान साम्राज्य का

ISSN 2350-109X
www.indianscholar.co.in
Indian Scholar
An International Multidisciplinary Research e-Journal

भाग्योदय चरमोत्कर्ष पर था, मालवा और मेवाड़ के प्रतिभाशाली शासक चौहान सम्राटों कि सेवा में अजमेर के दरबार में उपस्थित रहते थे।[13]

रावल जैसल ने अपने युवराज कालणजी को अधिकारच्युत करके छोटे राजकुमार शालिवाहन को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया था। यधपि रावल शालीवाहन भाटियों के प्रथम शासक थे जिनका राज्याभिषेक जैसलमेर के नवनिर्मित किले में किया गया था,परन्तु युवराज बीजक के दुष्कर्म से लज्जित सामान्यतः वह अपने पूर्वजो के दूरस्थ देरावर के किले में निवास किया करते थे। बीजक को जैसलमेर से निर्वासित करके सैनिक संरक्षण में ऊँच्छ के किले में रखा गया था,किन्तु सन् 1175ई. में मोहम्मद गौरी के ऊँच्छ[14] पर आक्रमण के,उन्हें अपने दुष्कर्म पर पश्चाताप करने के लिए किले की सुरक्षा का दायित्व सौंपा गया। उस वीर राजकुमार ने किले की घेराबंदी को लम्बे समय तक साहसपूर्वक झेला किन्तु आखिर मोहम्मद गौरी ने षड्यंत्रपूर्वक, छलकपट से किले पर अधिकार कर लिया। चूँकि ऊँच्छ के किले रक्षा करते हुए राजकुमार बीजक मरे गये थे।

गुजरात केचालुक्य शासक भीमदेव द्वितीय (सन् 1178-1248 ई.) के विरुद आक्रमण करने के लिए मोहम्मद गौरी[15] ने सन् 1178 ई. में मुल्तान से कूच की। वह मुल्तान से ऊँच्छ, देरावर (वर्तमान पाकिस्तान में) , बीकमपुर, लुद्रवा से होते हुए गुजरात जा रहे थे। जैसलमेर रावल शालिवाहन ने उन्हें सुरक्षित मार्ग नही दिया और उनका रास्ता रोक दिया। गौरी के पहले आक्रमण को भाटियों ने पीछे धकेल कर विफल कर दिया था, परन्तु बाद की झडपों में वह हार गये। किन्तु जैसा कि एक सौ पचास वर्ष पहले रावल बाछुजी के समय भाटियों ने महमूद गजनवी की सेना के साथ किया था। वैसा ही गौरी के सेना के पिछले व पाशर्व भागों पर बार-बार धावे करके भाटियों ने उन्हें परेशान करके भौतिक हानि पंहुचा कर किया। पिछले व पाशर्व भागों पर छेडछाड से आपूर्ति सेवा से गौरी विचलित हो गए। उनकी सेना फलौदी, ओसियां, राखीचंद (फलौदी का एक गांव) सांडराव से होती हुए आगे बढ़ी। उन्होंने चालुक्यो के सामंत, चौहानों से नाडोल ले लिया। उनकी अग्रसर होती सेना ने किराडू (बाड़मेर) और नाडोल में लुट-पाट करके इन्हें नष्ट कर दिया। शिशु भीमदेव की माता, गुजरात की राजमाता नाईकी देवी ने उन्हें कयाद्रा (कसह्दा-आबू के निकट) के पास निर्णायक युद्ध में निश्चित रूप से पराजित कर उन्हें सिंध लौटने लिए बाध्य किया। सन् 1178 ई. में पराजित होकर पीछे लौटती हुई गौरी की सेना की कठिनाइयों और कष्ट उनके अग्रसर होने के समय की परेशानियों से अधिक झेलनी पड़े। बची-खुची जो सेना गजनी पहुचीं उसकी स्थिति बड़ी दयनीय थी। सोमनाथ से सिंध लौटती हुई महमूद गजनी की सेना की पहले भी भाटियों ने लगभग ऐसी ही दुर्गति कर डाली थी।[16] इसलिए उन्होंने सैन्य दृष्टि से अपनी सेना के पीछे के और पाशर्व भाग की सुरक्षा के लिए लुद्रवा पर अधिकार करके उसे किसी मित्र को सौपना उचित समझा। उन्होंने लुद्रवा पर

ISSN 2350-109X
www.indianscholar.co.in
Indian Scholar
An International Multidisciplinary Research e-Journal

अधिकार करके इसका शासन रावल शालिवाहन के बड़े भाई कालणजी, जिन्हें उनके राजगद्दी के अधिकार से उनके पिता रावल जैसल ने वंचित कर दिया था, को देना चाहा परन्तु स्वाभिमानी कालणजी ने इस प्रस्ताव को ठुकरा दिया। उनकी निष्ठा भाटी जाति के लिए सर्वोपरि थी। तत्कालीन शासक, अपने छोटे भाई रावल शालिवाहन, के प्रति वह विश्वासघाती कैसे हो सकते थे। वह सौभाग्य की प्रतीक्षा करते रहे । दैवयोग से युद्ध में रावल शालिवाहन की मुत्यु हो जाने पर वह जैसलमेर के शासक बने। इसलिए रावल शालीवाहन के पश्चात उनके बड़े भाई कालणजी सन् 1189 ई. में जैसलमेर की राजगद्दी पर बैठे। इनके समय में गजनी के सुल्तान मोहम्मद गौरी ने उग्रता से उत्तरी भारत के राज्यों का नाश करते हुए दिल्ली और अजमेर के चौहान सम्राटों के लिए संकट खड़ा कर दिया था और सन् 1192 ई. के तराइन के दूसरे युद्ध में उसने सम्राट पृथ्वीराज चौहान के नेतृत्व में राजपूत राजाओं के संगठन को मटियामेट कर दिया था।[17]

कयाद्रा (कसहदा) का संघर्ष: 1178 मुहम्मद गौरी की प्रथम पराजय :-

वर्तमान में कसहदा, सिरोही राज्य में स्थित पश्चिम रेलवे के कोवरली स्टेशन से लगभग 4 मील उत्तर में स्थित आधुनिक कायद्रा[18] नामक गांव है। भारतीय सीमा पर मुल्तान और उच्छ पर अधिकार कर लेने से मुहम्मद गौरी का साहस बढा और अब वह 1178 ई. में मुल्तान और उच्छ होता हुआ गुजरात की राजधानी अन्हिलवाडा (नहरवाला) की और बढा।[19] "पृथ्वीराज महाकाव्य" के अनुसार इस अभियान के समय पृथ्वीराज चौहन के हस्तक्षेप के अनुमान से मुहम्मद गौरी उसे तटस्थ रखने के लिए उसके पास अपना एक दूत भेजा था। यदपि पृथ्वीराज चौहन तृतीय चालुक्य शासक की मदद करना चाहता था किन्तु अपने मंत्री कदम्बवास के हस्तक्षेप के कारण वह ऐसा नही कर सका[20] मुस्लिम सेना किराडू होते हुए आगे बड़ी और उसने नोडल[21] पर अधिकार कर लिया। किराडू से मिले कार्तिक सुद्री 13 गुरुवार सं. 1235/26 अक्टूम्बर 1178 ई. के शिलालेख में वर्णित है कि गुजरात के शासक भीमदेव के शासन संचालन में तेजपाल की पत्नी मानस ने तुरुषको द्वारा नष्ट की गयी मूर्ति के स्थान पर नवीन प्रतिमा स्थापित की थी।[22] सभी लेखकों ने तत्कालीन गुजरात के शासक का नाम भीमदेव[23] लिखा है। किन्तु गैर-मुस्लिम स्त्रोतों से स्पष्ट होता है कि उस

ISSN 2350-109X
www.indianscholar.co.in
Indian Scholar
An International Multidisciplinary Research e-Journal

समय मूलराज द्वितीय गुजरात का शासक था। अशोक कुमार मजुमदार का कहना है कि बाल मूलराज ने सं. 1235/1178 ई. तक शासन किया था और उसी वर्ष भीमदेव सिंहासनारूढ़ हुआ।[24] 1178 ई. में मुहम्मद गौरी का आक्रमण गुजरात के चालुक्य राज्य पर हुआ जो उस समय जैसा प्रो. हब्बीबुल्ला लिखते है, 'एक धनी राज्य था और जहां से भारत के भीतरी भाग में प्रवेश करने का सरल मार्ग था। पश्चिम राजपूत राज्यों पर उसका वास्तविक अधिकार था और इस प्रकार गुजरात राज्य गजनियो (पंजाब का गजनी राज्य) के पार्श्व से निकलकर हिंदुस्तान में प्रवेश करने के उसके मार्ग में बाधक था"

गुजरात में उस समय मूलराज द्वितीय शासन कर रहा था और अन्हिलवाडा उसकी राजधानी थी। मुहम्मद गौरी मुल्तान, उच्छ और पश्चिमी राजपुताना में होकर जब आबू पर्वत की तलहटी के पास पंहुचा तो वहाँ कयार्दा के पास मूलराज द्वितीय की सेना से उसका युद्ध हुआ। डेढ़ शताब्दी पूर्व महमूद गजनवी द्वारा मिली अपमानजनक पराजय का बदला लेने के लिए द्वितीय मूलराज ने मुस्लिम सेना का सामना किया। हसन निजामी ने लिखा है सुल्तान आबू पर्वत के पास घायल हुआ।[25] सं. 1319 के सुंधा पहाड़ी अभिलेख के 36वें श्लोक में जालोर के शासक कृतिपाल, नाडोल के शासक केल्हण, आबू के परमार शासक धारावर्ष ने भी भाग लिया था और धारावर्ष ने मूलराज की सहायता करके अपने राज्य को मुस्लिम आक्रमण से बचाने का प्रयास किया था।[26] मिन्हाजूस्सिराज के अनुसार " गुजरात के राय (राजा) के पास एक अत्यतं सुसज्जित शत्तिशाली सेना थी और बड़ी सख्या में हाथी थे इस युद्ध में मुहम्मद गौरी की पूर्ण पराजय हुई और यहाँ से बड़ी मुश्किल से जान बचाकर अपनी पराजित सेना के साथ भाग निकलने में सफल हो सका"

यदि "प्रबंध चिंतामणि" का कथन सही माना जाय तो कहा जा सकता है कि हिंदू सेना का नेतृत्व गुजराज के द्वितीय बाल मूलराज की माता नाइकी देवी ने किया था और उसी के नेतृत्व में हिन्दुओ की सेना ने मुस्लिम सेना को पूर्णतिय पराजित करके महमूद के हाथो हुई पराजय का बदला चूका लिया।[27]

गुजरात अभियान की असफलता के बाद मुहम्मद गौरी ने अब अपना ध्यान सीमावर्ती क्षेत्रों पर लगाया। 1179-80 ई. में पेशावर, 1182 ई. में देवल के समुद्र तट तक का भाग, इस समय देवल पर सुमरावंश[28] के शासको का अधिकार था । 1185-86 ई. अंतिम गजनी सुल्तान खुसरो मलिक से सियालकोट तत्पश्चात 1186 ई. में लाहौर छीन लिया। उसने मुल्तान के गवर्नर सिपहसालार अलिकरम खां को लाहौर[29] में नियुक्त कर दिया।

इस प्रकार 1187 ई. तक मुहम्मद गौरी सम्पूर्ण प्राचीन गजनवी साम्राज्य का एक मात्र अधिपति बन गया। उस जैसे साम्राज्यवादी एवं महत्वाकांक्षी शासक के अधीन पंजाब के भू-भाग के आते ही सीमावर्ती हिंदू शासको से उसका

ISSN 2350-109X
www.indianscholar.co.in
Indian Scholar
An International Multidisciplinary Research e-Journal

संघर्ष अनिवार्य हो गया। इस प्रकार उत्तरवर्ती शासको के समय शिथिल हुआ । आक्रमण पुनः एक नये जोश के साथ नये सिरे से प्रारम्भ हो गया।

तराइन का प्रथम युद्ध (1191ई.) : मुहम्मद गौरी की द्वितीय पराजय

गजनवी शासको का राज्य भारत के उत्तरी-पश्चिमी छोर तक प्रसारित था और वे सिंध,पंजाब और राजस्थान के पश्चिमी भागों में समय-समय पर घुसपैठ किया करते थे। जब गौर वंश के शासक प्रबल हुए तो इनका आधिपत्य गजनी राज्य पर भी जमने लगा। गियासुद्दीन गौरी ने अपने छोटे भाई मोहम्मद गौरी को 1173 ई. में गजनी का गवर्नर नियूक्त किया जिसने भाटी राजपूतो से उच्छ और करर्मेथियनो से 1175 ई. में मुल्तान ले लिया।[30] उसने अपनी महत्वाकांक्षा की पूर्ति के लिए 1178 ई. में गुजरात को भी लेने का प्रयत्न किया था। जिसमे भीमदेव चालुक्य ने उस परास्त कर इस बात का परिचय दिया कि भारतीय राजाओ से टक्कर लेना सरल काम नही है। इस पराजय से वह हताश नही हुआ, वरन उसने अपनी स्थिति को शक्तिशाली बनाने के लिए सिंध और पेशावर पर अधिकार स्थापित कर लिया। 1181 ई. में सियालकोट के दुर्ग पर और1186 ई. में खुसरू मलिक को परास्त कर लाहौर कर उस पर अधिकार कर लिया तथा अपनी शक्ति को भारत की उत्तर-पश्चिम सीमा तक विस्तारित कर ली ।[31]

पृथ्वीराज तृतीय जो इस समय अपने दिग्विजय की योजना को साकार बना चुका था और एक वृहत राज्य का स्वामी था उसका राज्य सतलज नदी से बेतवा नदी तक और हिमालय के नीचे के भागों से लेकर आबू तक प्रसारित था।[32] इस विशाल राज्य सीमा की सुरक्षा करना उसका उत्तरदायित्व हो चूका था। जिससे उसका सीधा सर्म्पक तुर्की राज्य सीमा से होना स्वाभाविक था। चौहान और तुर्क एक प्रकार से निकट के पडौसी और शत्रु निर्धारित हो चुके थे। ऐसी स्थिति में यदि चौहान अपनी शक्ति को अक्षुण बनाये रखना चाहते थे। तो उन्हें तुर्को को उत्तर-पश्चिम सीमांत भागों से निकाल देना आवशक था। और यदि मोहम्मद गौरी तुर्की सल्तनत को विस्तारित करना चाहता था तो उसके लिए दिल्ली और अजमेर लेना आवश्यक था जो भारतीय सत्ता के आवश्यक केन्द्र थे। इस प्रकार की राजनितिक स्थिति ने 1178 से 1190 ई.के बीच चौहान-तुर्क छेडछाड को जन्म दिया। इन्ही सीमन्त छेडछाड की घटनाओं को पृथ्वीराज रासो ने चौहानों और तुर्को की 21 बार मुठभेड़ होना लिखा है जिसमे चौहानों को विजेता होना बताया है। हम्मीर महाकाव्य[33] पृथ्वीराज का गौरी को सात बार परास्त होना लिखता है। पृथ्वीराज प्रबंध[34] आठ बार हिंदू-मुस्लिम संघर्ष के होने का जिक्र करता है । प्रबंध कोष[35] का लेख बीस बार गौरी का पृथ्वीराज द्वारा कैद के मुक्त करना बताता है। सुर्जन चरित्र[36]

ISSN 2350-109X
www.indianscholar.co.in
Indian Scholar
An International Multidisciplinary Research e-Journal

में 21 बार और प्रबंध चिंतामणि[37] में 23 बार गौरी का हारना अंकित है। उपयुर्क्त गैर-मुस्लिम स्रोतों में वर्णित पृथ्वीराज द्वारा मोहम्मद गौरी को बार-बार बंदी बनाकर छोड़ने का जो वर्णन है। वह काल्पनिक एंव अतिशयोक्तिपूर्ण हो सकता है। मुस्लिम इतिहासकारो ने मोहम्मद गौरी की तबरहिन्द विजय के पूर्व किसी अभियान का वर्णन नही किया तथापि गैर-मुस्लिम स्रोतों से पता चलता है कि पंजाब अधिकृत करने के उपरांत ही उसका हिन्दू शासको से संघर्ष प्रारम्भ हो गया था और सम्भवतः इसी कारण मुस्लिम लेखको ने इसका उल्लेख नही किया। इन वर्णनो का अर्थमात्र मुस्लिम सेनापतियो के प्रारम्भिक घावो की असफलता ही मानी जा सकती है। छोटे-छोटे अभियानों के उपरांत मुहम्मद गौरी आगे बढा और 1191ई. में तबरहिंद[38] के दुर्ग पर आक्रमण किया गया। कही-कही इसे सरहिंद भी लिखा गया है फरिश्ता ने इसे वितुंडा लिखा है। आधुनिक लेखक एच.जी.रेवटी, वुल्जले हेग, ए.बी.एम.हबीबुला, के.ए.निजामी, कनिघम ने भटिंडा लिखा है। जबकि दशरथ शर्मा ने इसकी पहचान सरहिंद से की है। किसी भी मुस्लिम सेना ने तबरहिन्द (सरहिंद) में वहा की रक्षक सेनाओ के प्रतिरोध का वर्णन नही किया। अत: यह कहना मुश्किल है कि किस प्रकार सरहिंद जैसे सुदृढ किले पर मुसलमानों को विजय प्राप्त हुई। सम्भवतः रक्षक सेना की कमी ही इस विजय का कारण रही होगी। मोहम्मद गौरी ने दुर्ग पर अधिकार करने बाद उसे जियाउद्दीन तुलाकी को सौप दिया, किन्तु उसने अपनी सुरक्षार्थ सुल्तान से घुड़सवारो की मांग की। तब सुल्तान उसकी प्रार्थना को पूर्ण कर गजनी लौट गया और उसे निर्देश दिया की वह आठ महीने तक इसे अपने अधिकार में रखे। इससे प्रतीत होता है कि मोहम्मद गौरी को अपनी विजय पर संदेह था और वह गजनी से पुनः नई तैयारी के साथ प्रस्थान करना चाहता था। परन्तु अजमेर के चौहान शासक पृथ्वीराज तृतीय (रायपिथौरो- मुस्लिम लेखक पृथ्वीराज तृतीय को सामान्यता रायपिथौरो अथवा कोलाराय लिखते है)[39] उसके मनोभावों को पूर्ण नही होने दिया। ज्यो उसको अपनी सीमावर्ती प्रदेश पर मुस्लिम विजय का समाचार मिला,उसने तुरंत दिल्ली के तोमर शासक चाहडपाल[40] (गोविन्दराज) सहित एक बड़ी सेना के साथ अपने खोये हुए प्रदेश को अपने अधिकार में करने के लिए प्रस्थान किया।

दिल्ली के तोमर शासक का नाम इतिहारकार भिन्न-भिन्न बताते है। तबकात-ए-नासिरी[41]में गोविन्द, कंद, खान्द, खांदी, निजामुद्दीन अहमद ने खांदीराय, बदायूँनी ने खन्दीराय जबकि फरिश्ता ने इसे चावुंडाराय[42] लिखा है जबकि

ISSN 2350-109X
www.indianscholar.co.in
Indian Scholar
An International Multidisciplinary Research e-Journal

एसामी ने इसे गोविन्द राय ही लिखा है[43] हरिहर निवास द्विवेदी इसे दिल्ली का तोमर शासक चाहडपाल 1189-1192 ई.बतलाते है।[44] अलाउद्दीन खिलजी के समकालीन ठक्कुरफेरु ने अपनी पुस्तक में विभिन्न शासको की मुद्राओ का उल्लेख करते हुए दिल्ली के तोमर शासको की मुद्राओ का उल्लेख किया है जिसमे चाहडपलाहे (चाहडपल)के सिक्को का उल्लेख है।[45] अत: अंतिम तोमर शासक चाहडपाल को हम उस समय दिल्ली का शासक मान सकते है और संभवतः इसी को मुस्लिम लेखको ने भिन्न-भिन्न प्रकार से लिख दिया है। मोहम्मद गौरी को वापस आना पड़ा और दोनों सेनाओं का तराइन नामक स्थान पर संघर्ष हुआ।

यह तराइन स्थान कहा है, इस विषय में विद्वानों में मतभेद है डॉ.ए.एल.श्रीवास्तव ने इसे भंटिडा के पास बताया है।[46] एच.जी.रैवटी ने तराइन के स्थान पर कही-कही नरायन भी लिखा है परन्तु यह मात्र नुक्ते या बिंदु के हेर-फेर से है[47]कनिघम ने तराइन की पहचान भटिंडा और सिरसा के मध्य भटिंडा से 27 मील और सिरसा 20 मील दूर स्थित तोरवाना नामक गाँव से किया है। इसी मत को हबीबुल्ला,के.ऐ निजामी,आदि इतिहासकारों ने स्वीकार किया है। [48] इसके विपरीत दशरथ शर्मा ने करनाल जिले में स्थित तरावरी तथा डी.सी.गांगुली ने थानेश्वर से 14 मील तथा दिल्ली से 80 मील दूर स्थित तराइन से इसकी पहचान करते है।[49]

मिनहाज के अनुसार राजपुताना के सभी राणा पृथ्वीराज के साथ थे। फरिश्ता के अनुसार उसकी सेना की संख्या 2 लाख घुड़सवार और 30 हजार हाथी थे[50]।उपयुर्क्त मुस्लिम लेखको के वर्णन में अतिशयोक्ति हो सकती है क्योंकि राजपुताना के समस्त रायो और राणाओ का 30 हजार हाथियों सहित रणस्थल में पहुंचना असम्भव सा लगता है।[51] गोपीनाथ शर्मा ने भी लिखा है कि जम्मू के राजा का एक शिष्टमंडल मोहम्मद गौरी से मिला था।[52]

ISSN 2350-109X
www.indianscholar.co.in
Indian Scholar
An International Multidisciplinary Research e-Journal

युद्ध के प्रथम चक्र में ही मुस्लिम सेना की बाँई और दाई कतार टूट गयी और इसमें इतनी अव्यवस्था फ़ैल गयी कि वह एक परिधि में आ गये। केंद्र में सुल्तान जब अपनी सेना की अव्यवस्था देखी तो वह अपनी सेना को प्रोत्साहित करने के लिय जब पृथ्वीराज की सेना और बढा। यह देख कर दिल्ली का शासक चाहडपाल जो सम्भवतः सेना के अग्रभाग का नेतृत्व कर रहा था, ने अपने हाथी को मोहम्मद गौरी की और किया और दोनों सेनानायको में संघर्ष प्रारम्भ हुआ। मोहम्मद गौरी ने हाथी पर सवार गोविन्द पर भाले से प्रहार किया जिससे उसके सामने के दो दांत टूट गये। तभी उसने भी अपने भाले से सुल्तान के कंघे पर वार किया। फलस्वरूप सुल्तान इतनी बुरी तरह से घायल हो गया कि अपने घोड़े पर भी बैठने में असमर्थ हो गया। वह घोड़े से गिरने वाला ही था कि उसकी सेना के एक खिलजी सैनिक ने उसे पहचान लिया और युद्ध स्थल से बाहर ले गया। मुस्लिम सेना पराजित होकर भागने लगी। फरिश्ता का कथन है राजपूतो ने उसका 40 मील तक पीछा किया परन्तु यह उनका दुर्भाग्य था कि भारत में भावी मुस्लिम साम्राज्य का निर्माता घायल और पराजित अवस्था में भी उनके हाथ की पहुंच से भी दूर हो गया। मिनहाज का कहना है कि राजपूत सेना के द्वारा पीछा किये जाने से दूर पंहुचने पर अनेक गौर सैनिक सुल्तान के पास आ गये और उन्होंने अपने भालो को तोड़ कर पालकी बनाई और उस पर सुल्तान को गजनी ले गये। यहिया के अनुसार सुल्तान गजनी चला ला गया जबकि फरिश्ता कहता है कि मोहम्मद गौरी लाहौर में घाव ठीक होने तक रुखा तत्पश्चात गौर गया। गोपीनाथ शर्मा के अनुसार युद्ध में पराजित व घायल मुहम्मद गौरी जब जम्मू से गुजर रहा था तो वहाँ के राजा का एक शिष्टमंडल उससे मिला था जिससे उसे आपत्तिकल में बड़ी सान्त्वना मिली।[53]

विजय की मद में राजपूत सेना तराइन से आगे बड़ी और तबरहिन्द के किले का घेरा डाल दिया। गोपीनाथ शर्मा के अनुसार पृथ्वीराज ने जियाउद्दीन तुलाकी से किला छिन्न लिया और तुलाकी को बंदी बनाकर अजमेर लाया गया जहाँ उससे विपुल धन लेकर उसे छोड़ दिया गया जबकि मिनहाज के वर्णन से पता चलता है कि जियाउद्दीन तुलाकी ने 13 महीनों तक राजपूतो का सामना तत्पशचात राजपूतो ने उस किले पर अपना अधिकार जमा लिया। इस प्रकार चौहानों ने अपने भूभागो को अधिकृत कर महमूद द्वारा स्थापित सीमा रेखा को पुर्नजीवित कर दिया।[54]

प्रथम तराइन का युद्ध तुर्कों की पराजय की एक महान घटना है परन्तु जैसा की मिनहाज लिखता है कि शीघ्र ही मैदान से भागी हुई तुर्की सेना आगे जाकर फिर एक हो गयी और वे सकुशल गजनी पहुँच गयी। वैसे तो तुर्कों के विरुद्ध लडे गये युद्धो में तराइन का प्रथम युद्ध हिन्दू विजय का एक गौरवपूर्ण अध्याय है, परन्तु इस युद्ध में की गयी भूल भारतीय भ्रम का एक कलंकित पृष्ट भी है। पृथ्वीराज ने कभी भी यह प्रयत्न नही किया कि इस विजय को स्थायी विजय बनाया जाये। विजय के आनदं से मग्न होकर उसने पराजित सैनिको का, जो अस्त-व्यस्त अवस्था में थे,पीछा न किया। कुछ लोग इसको पृथ्वीराज की उदारता मानते है। परन्तु दशरथ शर्मा इसको पृथ्वीराज का शैथिल्य मानते हुए लिखते है कि वैसे उदारता का प्रतिपादन हिन्दू शास्त्रों में मिलता है, परन्तु ऐसी उदारता ना तो सैनिक नियमो से है न मुस्लिम युद्ध-प्रणाली से। यह वास्तव में उसकी भारी भूल मानी जानी चाहिए इसके विपरीत संयोगिता के अपहरण और कन्नौज के पददलित करने में लग कर उसने एक बहुत बड़ा शत्रु अपने विरुद्ध उत्पन कर लिया। अन्यथा सम्भवतः मुहम्मद गौरी के दुसरे आक्रमण के समय कनौज की सहायता बड़ी उपादेय सिद्ध होती। इतना ही नही संयोगिता से विवाह करने के बाद

ISSN 2350-109X
www.indianscholar.co.in
Indian Scholar
An International Multidisciplinary Research e-Journal

पृथ्वीराज का जीवन पतनोमुन्ख दिखाई देता है। उसने विलासी और प्रमादी होकर राजकीय और सैनिक कार्यो की उपेक्षा की, जिससे वह विशाल राज्यों को भलीभांति ना संभाल सका। यहाँ तक कि पराजित शत्रु अपनी पराजय का बदला लेने की पूरी तैयारी कर रहा था वहाँ पृथ्वीराज अपने उत्तर–पशिचमी सीमांत भागो की सुरक्षा का कोई प्रबंध न सोच सका। उसने शत्रु को परस्त कर दिया,परन्तु उसे नष्ट करने पर कोई ध्यान न दिया।[55]

आधुनिक लेखको ने हिन्हुशात्र और राजपूती शान के अनुसार मुस्लिम सेना का पीछा करके उसे नष्ट न करने के आरोप पृथ्वीराज चौहान पर लगाया है। समकालीन परिस्थियों में यह आरोप निराधार प्रतीत होता है।

जबकि फरिश्ता स्पष्ट लिखता है कि सुल्तान का 40 मील तक पीछा किया गया। और मिनहाज के अनुसार भी मुस्लिम सेना राजपूतो द्वारा पीछा किये जाने से परे आने पर सुल्तान के पास पहुंची।[56] उपयुर्क्त उद्वरणाओ से स्पष्ट होता है कि मुस्लिम सेना का कई मील तक राजपूत सेनाओके द्वारा पीछा किया था। यहाँ पर यह बात स्मरण रखनी चाहिए कि मुस्लिम घुड़सवार अपने द्रुतगति वाले घोड़े पर, जिन्हें उत्तरी भारत की विजय का श्रेय दिया जाता है, तीव्र गीत से पंजाब की और भागे होंगे जिसका उन्हें की गति से पीछा करती राजपूतो के वश की बात नही थी। दुसरे तराइन से 27 मील की दुरी पर स्थित तबरहिन्द का किला अभी मुसलमानों के हाथ में था जिसे,बिना हस्तगत किये आगे बढना सामरिक भूल होती। हुमांयू के चुनार किले की भांति यह चौहानों का दुर्भाग्य था कि तबरहिन्द लेने में उन्हें 13 महीने लग गये थे। उसके पश्चात वे इस स्थिति में नहीं रहे होंगे कि आगे बढकर पंजाब पर हमला करते। चौहान नरेश ने भी अपने राज्य हित में अपने राज्य की गाहड़वालो एंव चंदेलो के हाथ असुरक्षित छोडकर सुदूर पंजाब पर आक्रमण करना उचित नही समझा होगा। यधपि राष्ट्रीयता की दृष्टी से आक्रमण करना उचित था किन्तु जिस काल में राज्यहित ही सर्वोतम था, गाहडवाल और चंदेल राज्य को छोडकर चौहान हित हेतु आगे जाना मुर्खता ही होती।[57]

तराइन का द्वितीय युद्व (1192ई.) : चौहानों की पराजय

कायन्द्रा और तराइन की प्रथम पराजय से मोहम्मद गौरी हतोत्साहित नही हुआ। गजनी के इस साहसी सुल्तान के सिर पर भारत में मुस्लिम साम्राज्य के संस्थापक का सेहरा बंधना लिखा था। गजनी पहुँच कर उसने उन सैनिक अधिकारियों को, जो अनुशासित नही थे सार्वजनिक रूप से दंडित किया और उसने शीघ्र ही नये ढंग से युद्व की तैयारी आरम्भ कर दी। और इस सम्बंध में वह इतना अधिक व्यग्र था कि उसके लिए आराम हराम हो गया।

उसे कुछ हिन्दू सीमावर्ती लोंगों ने भी सहायता का आशवासन दिया था दुसरे मोर्चो के सम्बंध में उसने जयचंद से भी बातचीत का सिलसिला स्थापित कर रखा था जम्मू के राजा विजयीदेव ने अपने पुत्र नरसिंह को अपनी सेना सहित मोहम्मद गौरी की सहायतार्थ भेजा।[58] कैमास आख्यान से भी उक्त तथ्य की पुष्टि होती है। हम्मीर महाकाव्य से पता चलता है कि उसे घटैक देश के राजा की सहायता प्राप्त हुई थी। हरिहर निवास द्विवदी के अनुसार घटैक देश जम्मू के

ISSN 2350-109X
www.indianscholar.co.in
Indian Scholar
An International Multidisciplinary Research e-Journal

लिय प्रयुक्त हुआ है। गोपीनाथ शर्मा ने भी लिखा है कि जम्मू के राजा का एक शिष्टमंडल मोहम्मद गौरी से मिला था।[59] पृथ्वीराज चौहान का मंत्री सोमेशवर जो युद्व के पक्ष में नही था पृथ्वीराज द्वारा दंडित किया गया अतएव वह शत्रु से मिल गया था।[60]

उसने अपनी सेना में तुर्क,ताजिक,अफगानों को सम्मिलित किया और उन्हें शस्त्रों से सुसज्जित किया। याहिया और बदायुनीं ने मुहम्मद गौरी की सेना की सख्यां मात्र 40 हजार घुड़सवार तथा एसामी ने एक लाख 30 हजार लिखी है। जी.एस.रैवटी के अनुसार जब उसकी सेना में 1 लाख 20 हजार घुड़सवार हो गये। तब उसने भारत पर आक्रमण करने का प्रयास किया। फरिश्ता के अनुसार राजपूत सेना में 3 लाख घुड़सवार, 3 हजार हाथी और पैदल सेना थी। उसके साथ 150 राजपूत राजा थे किन्तु फरिश्ता के कथन में अतिश्योक्ति का अंश है। विरुद्ध-विधि-विघ्वंश से पता चलता है कि इसी समय पृथ्वीराज चौहान का संधि-विग्रहिक स्कन्द किसी अन्य युद्व में गया था। अत: कहा जा सकता है कि यघपि पृथ्वीराज चौहान के पास बड़ी सेना रही होगी किन्तु अन्य युद्व में सेना का कुछ भाग चले जाने से उसकी सेना की सख्यां प्रथम तराइन युद्व से कम रही होगी।[61]

मुहम्मद गौरी 1192 ई. लाहौर और मुल्तान के मार्ग से फिर उसी मैदान में आ गया जहां उसे करारी हार मिली थी। मुहम्मद गौरी ने अपने एक सरदार किवामुलमुल्क रूहुद्दीन हमजा को अजमेर के चौहान नरेश पृथ्वीराज के पास अधीनता एवं इस्लाम स्वीकार करने के लिए भेजा परन्तु चौहान नरेश ने उत्तर देते हुए रणस्थल में मिलने को कहा। वह भी एक बड़ी सेना एकत्रित करके शत्रु का मुकाबला करने के लिए तराइन के मैदान में आकर जम गया । दिल्ली का तोमर शासक गोविन्दराय इस बार भी उसके साथ था।[62]

तराइन के द्वितीय युद्व की रणप्रणाली के सम्बंध में मुख्यतया तीन प्रकार के विवरण प्राप्त होते है।

मिनहाज के अनुसार मुहम्मद गौरी ने इस युद्व के लिए बड़ी सावधानीपूर्वक योजना बनाई थी उसकी योजना सर्वप्रथम अपने घुड़सवारो द्वारा दूर से तीर बरसा कर शत्रु को थका देने तत्पशचात अपने सुरक्षित सैनिको द्वारा उन्हें अंतिम रूप से विनष्ट करने की थी। एसामी के अनुसार युद्व के दोनों पक्षों ने बड़ी ही ठोस व्यूह रचना की थी और दोनों दलों ने प्रारम्भ से ही आमने समाने युद्व किया जिसमे राजपूतो की पराजय हुई इसके विपरीत फरिश्ता का कथन है कि मुहम्मद गौरी ने प्रारम्भ से ही हिन्दुओ को धोखे में रखा और उन पर अचानक आक्रमण कर अपनी सफल व्यूह रचना से उन्हें पराजित कर दिया। मुहम्मद गौरी शत्रु पर छल से विजय प्राप्त करना चाहता था इसलिए उसने दुबारा दूत भेज कर यह आशवासन दिलवाया कि वह युद्व की अपेक्षा संधि करना अच्छा मानता है और इसी सम्बंध उसने एक दूत अपने भाई के पास भी भेजा है और कहा कि ज्योंही उसे गजनी से आदेश प्राप्त हो जायेगा वह स्वदेश लौट जायेगा संधि के सम्बंध उसने बताया कि वह पंजाब, मुल्तान, और सरहिंद को लेकर वह संतुष्ट रहेगा।[63]

ISSN 2350-109X
www.indianscholar.co.in
Indian Scholar
An International Multidisciplinary Research e-Journal

फरिश्ता का कहना है हिन्दुओ ने मुहम्मद गौरी को लिखा कि वे हिन्दुओं की वीरता और साहस से परिचित है और इस समय हमारी सख्यां भी अधिक है जो प्रतिदिन बढती ही जा रही है। इन परिस्थिति में उनके लिए उचित होगा कि वे चुपचाप वापस लौट जाये और वापस लौटती हुई मुस्लिम सेना को वे तंग नही करेगें यदि मुसलमान लोग ऐसा नही करके युद्व करने का निर्णय करेगें तो हम उन्हें नष्ट कर देंगे। सुल्तान ने बड़ी ही चालाकी से उनके प्रति आभार प्रकट करते हुए कहा की मै तो अपने बड़े भाई की आज्ञा से यहाँ आया हूँ। मै युद्व में रूचि नही रखता हूँ यदि वह समय दे तो मै अपने भाई से इस बारे में सलाह ले लू। इस पत्र को पाकर हिन्दुओ ने समझा कि मुस्लिम सेना में भय है और वे रात भर मौज मस्ती लेते रहे। दूसरी तरफ मुहम्मद गौरी ने रातभर युद्व की योजना बनायी और नदी पार कर राजपूत सेना के पास आ गया और सूर्योदय से पूर्व ही उन पर आक्रमण कर उन्हें पराजित कर दिया।[64]

खलिक अहमद निजामी फरिश्ता द्वारा वर्णित हिन्दुओ और मुसलमानों के बीच पत्र-व्यवहार[65] और सुल्तान द्वारा हिन्दुओ को घोखे में रखे जाने की घटना को अस्वीकार करते हुए कहते है कि राजपूत इतने मुर्ख नही थे कि जब दोनों सेनाएं आमने-सामने पड़ी थी,तब वह ऐसा प्रस्ताव स्वीकार करते।[66]

इस संधि वार्ता ने पृथ्वीराज चौहान को भ्रमित कर दिया वह थोड़ी सी सेना के साथ तराइन के मैदान में था शेष सेना जो स्कन्द के साथ थी वह तराइन के में ना आ सकी उसका दूसरा सेना सेनाध्यक्ष उदयराज उस समय राजधानी से रवाना ना हो सका उसका मंत्री सोमेश्वर जो युद्व के पक्ष में न था पृथ्वीराज द्वारा दंडित किया गया अतएव वह शत्रु से मिल गया जो सेनाएं सीमांत प्रदेशों पर थी उन्हें तराइन में आने का संदेश भेजा गया पृथ्वीराज की जो सेना तराइन के मैदान में थी वे संधिवार्ता के भ्रम के कारण बेफ्रिक थी। मुस्लिम स्रोत जामी-उल-हिकायत[67] के अनुसार मुहम्मद गौरी ने पृथ्वीराज को अधिक भ्रम में रखने के लिए अपने शिविर में लकडियां एकत्रित कर जलवायी ताकि वह समझे की मुस्लिम सेना अपने शिविर में पड़ी है। और दूसरी और वह अपने कुछ सैनिको को शिविर में छोडकर मुख्य सेना के साथ प्रयाण करता हुआ हिन्दू शिविर के पीछे पहुचं कर प्रातःकाल में ही आक्रमण कर दिया। गैर-मुस्लिम स्रोतों के अनुसार जब पृथ्वीराज चौहान जब सोया हुआ था,उसी समय मुहम्मद गौरी ने उसके शिविर पर आक्रमण कर दिया।[68] ज्योंही प्रभात हुआ राजपूत सैनिक शौचादि कार्यो से निवृत होने बिखरे हुए थे तभी अचानक तुर्कों ने उन पर आक्रमण कर दिया। वास्तव में यह कोई नियमत युद्व ना रहा चारो और भगदड़ मच गई।[69]

यदि मुस्लिम और गैर-मुस्लिम स्रोतों पर विचार किया जाएतो कहा जा सकता है कि प्रारम्भ दोनों सेनाएं व्यह रचना करके आमने सामने पड़ी रही होंगी और एक दिन मुस्लिम सेना अचानक सूर्ये उदय पूर्व ही जब हिन्दू लोग अपने दैनिक

ISSN 2350-109X
www.indianscholar.co.in
Indian Scholar
An International Multidisciplinary Research e-Journal

जीवन की क्रियाओ से निर्वृत हो रहे होंगे। उन पर आक्रमण कर दिया होगा चुकि जब हिन्दू सेना जब काफी दूर फैली रही होंगी अत: उन्हें किसी प्रकार तैयार होने का समय नही मिला होगा इस प्रकार हिन्दूओ ने भूखे पेट मुसलमानों का आक्रमण झेला होगा यह युद्व कम से कम दोहपर तक आवश्क चला होगा और तत्पशचात हिन्दू सेना के थक जाने पर मुहम्मद गौरी ने अपनी सुरक्षित सेना द्वारा उन पर निर्णायक आक्रमण किया भूखे और थके हिन्दुओ के लिए ये आक्रमण असहनीय रहा होगा और वे अस्त-व्यस्त हो गये होंगे।[70] लगभग एक लाख हिन्दुओ के साथ दिल्ली का तोमर शासक गोविन्दराय रणस्थल में ही शहीद[71] हो गया। मिनहाज के अनुसार पृथ्वीराज जो हाथी पर चढ कर युद्व लड़ने चला था अपने घोड़े पर बैठकर मैदान में लड़ता रहा और अपनी पराजय को देखते हूँ युद्व स्थल से बाहर निकल गया और भागता हुआ वीर सिरसा के पास पकड़ा गया और मार दिया गया।[72]

इस प्रकार मुहम्मद गौरी को हिन्दुस्थान में प्रथम और सर्वोधिक महत्वपूर्ण सफलता हासिल हो गयी। इस युद्व का सबसे महत्वपूर्ण परिणाम यह हुआ कि उत्तर भारत के राजपूत राजा जो आपस में लड़ा करते थे,उनमे से एक स्थान अब मुसलमानों ने ले लिया और कालान्तर में उत्तरी भारत में प्रभुसत्ता हेतु मुख्यता हिन्दू और मुसलमानों में संघर्ष प्रारम्भ हो गया। तराइन के द्वितीय युद्व में विजय के परिणामस्वरूप मुहम्मद गोरी का अजमेर, हांसी, सरसुती,समाना, कोहराम, दिल्ली आदि क्षेत्रों[73]पर तुर्कों का अधिकार स्थपित हो गया। पृथ्वीराज चौहान को बंदी बनाकर मुहम्मद गौरी अजमेर ले गया जहाँ उसे बड़ी मात्रा में धन सम्पति प्राप्त हुई प्रतीत होती है कि पृथ्वीराज ने मुहम्मद गौरी के अधीनता स्वीकार कर ली फलस्वरूप उसे पुनः अजमेर का शासक[74] नियुक्त कर दिया गया। कुछ समय पशचात उसे षडयंत्र में लिप्त पाया गया। अत: उसे मार कर उसके पुत्र गोविन्द को करद शासक नियुक्त किया गया।

हरिराज चौहान का विद्रोह (1193 ई.): अजमेर में चौहान सत्ता की स्थापना :-

पृथ्वीराज चौहान तृतीय की मुत्यु के बाद मुहम्मद गौरी ने उसके पुत्र गोविन्दराज को आश्रित शासक नियुक्त किया था जब उसने करद शासक के रूप में शासन करना प्रारम्भ किया तो स्वाभिमान चौहानों ने इसे स्वीकार नही किया। फलस्वरूप सुअवसर मिलते ही पृथ्वीराज के भाई हरिराज ने सेनापति स्कन्द की सहायता से गोविन्दराज को भगा कर उस पर अधिकार कर लिया। हसन निजामी ने हरिराज[75] का नाम हीरज लिखा है किन्तु पृथ्वीराज विजय, विरूद्व-विधि-विघ्वंश, हम्मीर महाकाव्य[76] और शिलालेखो से पता चलता है की उसका शुद्ध नाम हरिराज ही था।

ISSN 2350-109X
www.indianscholar.co.in
Indian Scholar
An International Multidisciplinary Research e-Journal

हरिराज द्वारा अजमेर से भगा देने के बाद गोविन्द चौहान रणथम्भौर पहुंचा जहां किवामुल-मुल्करुद्दीन हमजा गढ़पति था। चौहान लोग अपनी प्रारम्भिक सफलताओ से इतना उत्साहित हुए की वे हरिराज के नेतृत्व में चौहानों के द्वितीय नगर रणथम्भौर से भी तुर्कों की सत्ता उखाड़ फेकने के लिए आगे बढ़े जिससे रणथम्भौर स्थित मुस्लिम सेना की स्थिति काफी कमजोर हो गयी। किवामुल-मुल्करुद्दीन हमजा ने दिल्ली स्थित ऐबक के पास सहायता के लिए सन्देश भिजवाया। फलस्वरूप चौहानों के कारण उत्पन संकट का सामना करने के लिय ऐबक साबिकुलमुक नसरुद्दीन को दिल्ली का प्रशासन सौपकर शीघ्रता से रणथम्भौर की और रवाना हुआ।[77]

ताजुल मआसिर से पता चलता है कि ऐबक के रणथम्भौर पहुँचने पर हरिराज वहां से हटकर अजमेर चला गया। कुतुबुद्दीन ऐबक के द्वारा रणथम्भौर के प्रशासनिक कार्यो को सुव्यवस्थित किया और पृथ्वीराज चौहान के पुत्र गोविन्दराज को अपना करद शासक नियुक्त किया जिसके बदले में उसे बड़ी धन राशि प्राप्त हुई। ऐबक द्वारा अजमेर जाने का विवरण नही है दिल्ली में विद्रोह की सुचना मिलने पर हरिराज के विरूद्व कोई कार्यवाही नही कर सका। ताजुल मआसिर के वर्णन से स्पष्ट नही हो पता है कि हरिराज को रणथम्भौर के साथ-साथ अजमेर से भी खदेड़ दिया था ,परन्तु आधुनिक लेखको का कहना है उसे दोनों से हटा दिया गया था कुछ काल बाद हरिराज ने पुन: विद्रोह किया।[78]

हरिराज का प्रथम विद्रोह दिल्ली- विजय के (1193 ई.) के पश्चात ही हुआ था। अजमेर के समीप तातोली से मिले हरिराज की पत्नी प्रतापदेवी के सं.1251/1194 ई. के अभिलेख से स्पष्ट हो जाता है कि हरिराज ने इन वर्षा में अजमेर का स्वन्त्रत शासक बना रहा क्योंकि इस अभिलेख में उसे स्वन्त्रत[79] हिन्दू शासक कहा गया है।

यधपि ऐबक की शीघ्रता के कारण से हरिराज अपने उदेश्य में पूर्णतया सफल नही हो सका, तथापि अजमेर से मुस्लिम सत्ता को,अल्पकाल के लिये ही सही, उसकी महत्वपूर्ण उपलब्धि थी। इसके साथ ही उसके द्वारा भगाए गये गोविन्दराज को ऐबक द्वारा रणथम्भौर में शासक नियुक्त किये जाने के कारण रणथम्भौर में मुस्लिम सत्ता के स्थान पर पुन:चौहान वंश की नींव पड़ गयी जिसने आने वाले समय में लगभग एक शताब्दी तक हिन्दूत्व के गौरव का नेतृत्व किया।

मुहम्मद गौरी के अधिकार में रणथम्भौर का दुर्ग:-

वंश भास्कर में रणथम्भौर के चौहानों को महान पृथ्वीराज तृतीय का वंश स्वीकार किया गया है व राव हम्मीर देव के पुत्र रतनसिंह को चितौड़ भेजने का उल्लेख है! हम्मीर महाकाव्य[80] में हम्मीर के संम्बंध में पृथ्वीराज के उत्तरोतर वंशज होना अकित है। सिरोही की बडूआ की पुस्तक में रणथम्भौर के चौहानों को पृथ्वीराज के काका सुरसेन की औलाद

ISSN 2350-109X
www.indianscholar.co.in
Indian Scholar
An International Multidisciplinary Research e-Journal

होना बताया है। मेयों कॉलेज के शिलालेख के आधार पर पृथ्वीराज तृतीय के पुत्र गोविदराज को अजमेर में अपना आश्रित शासक बनाया था इसके काका हरिराज ने गोविन्दराज को अजमेर से खदेड़ दिया, जिससे वह रणथम्भौर भाग गया।[81] इस प्रकार स्पष्ट है कि तेहरवीं शताब्दी में रणथम्भौर में चौहानों का शासन था। और यहाँ के चौहान वंश का पृथ्वीराज तृतीय से निकट का सम्बंध था गोविन्दराज जो इस वंश का प्रथम संस्थापक था, पृथ्वीराज का पुत्र था। पृथ्वीराज तृतीय के समय चौहान शक्ति काफी सम्पन हो चुकी थी। परन्तु तराइन के द्वितीय युद्व में (1192 ई.) पृथ्वीराज की पराजय के बाद चौहान शक्ति छीन-भिन्न होकर बिखर गई थी। इस विजय के उपरांत मुहम्मद गौरी विजित स्थलों को अपने प्रधान सेनानायक कुतुबुद्दीन ऐबक के अधीन छोड़कर गजनी चला गया। कुतुबुद्दीन ऐबक ने इन विजित क्षेत्रों पर अपनी तुर्क सेना रख रखी थी। इसी श्रंखला की कड़ी में ऐबक ने रणथम्भौर दुर्ग पर किवान-उल-मुल्क की अधीनता में तुर्क सेना को स्थापित किया।[82]

भारतवासी अपने देश में तुर्क शासन को सहन नही कर सके क्योंकि वह विदेशी और मुस्लिम था। अजमेर में भंयकर विद्रोह हुआ,जिसमे चौहानों ने अपनी स्वाधीनता पुन: प्राप्त करने के लिए तुर्कों को मार भगाने का प्रयत्न किया क्योंकि तुर्क शासकों ने कुछ विशेष कारणों से अजमेर का राज्य पृथ्वीराज चौहान तृतीय के पुत्र गोविन्दराज को वापस लौटा दिया। इस कृतज्ञता के फलस्वरूप गोविन्दराज ने मुहम्मद गौरी की अधीनता स्वीकार कर ली थी परन्तु अन्य चौहान वंशीय सरदारों को गोविन्दराज की अधीनता वाला शासन और उसका यह निर्णय कतई पसंद नही आया। इन सरदारों ने विद्रोह कर दिया और पृथ्वीराज तृतीय के छोटे भाई हरिराज[83] के नेतृत्व में गोविन्दराज को अजमेर से खदेड़ कर अजमेर पर अधिकार कर लिया और रणथम्भौर दुर्ग को घेर लिया जहां तुर्क सेना नियुक्त थी।[84]

यह सुचना पाकर कुतुबुदीन ऐबक को दिल्ली से रणथम्भौर आना पड़ा। उसने विद्रोहियों को परास्त कर करके रणथम्भौर से निकाल दिया। ताजुल मआसिर से पता चलता है कि ऐबक के रणथम्भौर पहुँचने पर हरिराज वहां से हटकर अजमेर चला गया। कुतुबुद्दीन ऐबक के द्वारा रणथम्भौर के प्रशासनिक कार्यो को सुव्यवस्थित किया।[85] परन्तु इस बार कुतुबुद्दीन ऐबक ने गोविन्दराज को अजमेर का राज्य ना देकर रणथम्भौर का राज्य दे दिया। जिसके बदले में ऐबक को काफी धन-सम्पति प्राप्त हुई। रणथम्भौर का दुर्ग गोविन्दराज के अधिकार में आने से कई वर्षों तक यह दुर्ग उसकी राजधानी रहा ! और गोविन्दराज की मृत्यु के बाद उसका पुत्र बल्हणदेव रणथम्भौर की गद्दी पर बैठा इस समय तक मुहम्मद गौरी की मृत्यु हो चुकी थी।[86]

ISSN 2350-109X
www.indianscholar.co.in
Indian Scholar
An International Multidisciplinary Research e-Journal

चौहान–तोमर सम्मिलित विद्रोह (1194ई.) : अजमेर में तुर्क-सल्तनत की पुनर्स्थापना:-

जिस समय ऐबक जयचंद गाहड़वाल के विरूद्व चंदवार के युद्व में व्यस्त था, अजमेर के चौहान शासक हरिराज को अपनी शक्ति को संगठित करने का मौका मिल गया और इसी समय हरिराज ने दिल्ली के तोमर राजकुमार अचलराय या अचलब्रह्म[87] को भी शरण और सहायता देकर अपनी और मिला लिया।

तोमर राजकुमार अचलराय अथवा अचल ब्रह्म के बारे में विभिन्न स्रोतों से भिन्न-भिन्न वर्णन मिलता है हसन निजामी ने इसका नाम जिहतर लिखा है। फरिस्ता ने इसे हेमराज (सम्भवतः हरिराज) का सेनापति चत्रराय लिखा है रैवटी और वुल्जले हेग ने भटराय लिखा है। और दशरथ शर्मा का कहना है कि यह हरिराज का सेनापति था और इसका वास्तविक नाम जैत्र या जैत्रराय था[88] हरिहर निवास द्विवेदी के अनुसार जिहतर का तात्पर्य दिल्ली के तोमर राजा द्वितीय तेजपाल के पुत्र अचलराय अथवा अचल ब्रह्म है जो अजमेर के चौहान शासक हरिराज की सहायता से अपने पूर्वजो की राजधानी दिल्ली पर अधिकार करना चाहता था।

यदि निष्पक्ष आलोचना करे तो द्विवेदी महोदय का मत उचित प्रतीत होता है कि हरिराज अभी तो स्वंय अजमेर मेंअपनी सत्ता को संगठित कर रहा था। और अभी तो चौहान राज्य के खोये हुए बहुत से प्रदेश रणथम्भौर आदि स्वंय उसके अधिकार में नही थे। उसके अथवा उसके किसी सेनापति द्वारा दिल्ली विजय की योजना बनाना असम्भव प्रतीत होती है अजमेर-घेरे के समय हरिराज की कायरता भी इस तथ्य की और संदेह उत्पन करती है कि कदाचित उसने अपने सेनापति को दिल्ली की और भेजा हो। इस स्थिति में यह उचित प्रतीत होता है उसने भगोड़े राजकुमार अचलराय अथवा अचल ब्रह्म को सहायता प्रदान की हो और चौहान सहायता से तोमर राजकुमार ने अपनी पैतृक भूमि दिल्ली को जितने की योजना बनाई हो।

जिहतर चौहान सहायता प्राप्त कर अपने पूर्वज की राजधानी दिल्ली पर अधिकार करने के लिए रवाना हुआ, किन्तु चौहानों और तोमरो की उपर्युक्त योजना क्रियान्वित होने से पूर्व ही ऐबक कोल-विद्रोह को शांत करके राजधानी दिल्ली पहुँच गया[89] जिससे उनकी योजना की असफलता सुनिश्चित हो गई। ऐबक को जब 1194 ई. में अजमेर के हरिराज और तोमर राजकुमार अचलब्रह्म के बारे में जानकारी मिली तो उसने उनसे निपटना उचित समझा। और इसी समय अचलब्रह्म अपनी सेना के साथ दिल्ली की सीमा पर आ धमका जिससे वहा के लोगों पर गम्भीर संकट उत्पन हो गया। ऐबक ने अपनी सेना के एक भाग को राजधानी की सुरक्षा के लिए छोडकर उस विद्रोह को दबाने के लिए प्रस्थान किया। जब शायद अचलब्रह्म को दिल्ली में ऐबक की उपस्थिति का ज्ञान नही था अत: जब उसे ऐबक के आने का सन्देश मिला तो वह घबराकर तुर्कों की सेना का सामना करने की अपेक्षा अजमेर[90] आ गया।

ISSN 2350-109X
www.indianscholar.co.in
Indian Scholar
An International Multidisciplinary Research e-Journal

अब कुतुबुद्दीन ऐबक ने चौहान शासक हरिराज को समूल नष्ट करने का निश्चय किया और अजमेर पहुंच कर तारागढ़ के नाम से प्रसिद्व दुर्ग को घेर लिया और तारागढ़ में घिरे चौहान असहाय हो गये। हरिराज अपने को असुरक्षित समझकर अपनी समस्त रानियों के साथ अग्नि को समर्पित हो गया लेकिन हसन निजामी ने हरिराज का कोई अन्त ना करके अचलब्रह्म द्वारा ही अग्नि में भस्म हो जाने का उल्लेख किया है परन्तु हम्मीर महाकाव्य[91] से स्पष्ट है कि अग्नि में भस्म होने वाला अचलब्रह्म नही बल्कि हरिराज और उसकी समस्त रानियाँ थी हरिहर निवास द्विवेदी का कहना है कि अचलब्रह्म किसी प्रकार अजमेर से निकलकर तोमरो के प्राचीन स्थान ऐसाह पहुंच गया जहाँ पर उसने कालान्तर में ग्वालियर में स्थापित होने वाले राजवंश की नींव डाली[92]। इस प्रकार शाकम्भरी के चौहान राजवंश के लगभग 5 शताब्दियों के उज्ज्वल और गौरवपूर्ण इतिहास का अन्त हो गया। कुतुबुद्दीन ऐबक ने अजमेर पर अधिकार कर लिया। लगभग 2 महीने तक अजमेर नगर में मारकाट तथा अव्यवस्था बनी रही[93] अजमेर थ्रू इनस्क्रप्संस के अनुसार कुतुबुद्दीन ऐबक ने सैयद हुसेन खिगसवार[94]को अजमेर का गवर्नर जबकि हरविलास शारदा के अनुसार अजमेर का गवर्नर सैयद हुसेन मशेदी[95]को नियुक्त किया है।

मुहम्मद गौरी और मारवाड़ :-

सिंध और मारवाड़ की सीमा मिली हुई होने के कारण समय-समय मुसलमानों के अनेक आक्रमण यहाँ पर होते रहते थे। वि.सं.1082/ ई.सं.1025 में जिस समय महमूद गजनवी ने सोमनाथ पर चढाई की थी, उस समय वह नाडोल की तरफ से होता हुआ उधर गया था। उसके बाद भी कई मौके पाकर गजनवी वंश के हाकिमो की सेनाएं लाहौर से आगे बढकर मारवाड़ के भिन्न-भिन्न प्रदेशों पर आक्रमण करती थी और उन्हें के एक हमले में सांभर का एक चौहान राजा दुर्लभराज मारा गया था। परन्तु उसका वंशज अजयदेव और उसका पुत्र अन्नोराज इन आक्रमणकारियों को मार भगाने में सफल रहे। अन्नोराज का छोटा पुत्र विग्रहराज(बीसलदेव) चतुर्थ था। देहली के अशोक स्तम्भ (जिसको फिरोजशाह की लाट कहते है) इसका वि.सं.1220 /1163 ई. का एक लेख खुदा है। जिससे ज्ञात होता है कि इसने आर्योंवत मुस्लिम सेनाओं को पराजित किया था।[96]

इस समय तक तो मुसलमानों के पैर नही जमे और वो लुट मार कर लौटते रहे परन्तु इसके बाद मुहम्मद गौरी के आक्रमण शुरू हुए। पहली बार मारवाड़ में नाडोल पर मुहम्मद गौरी का हमला हुआ। परन्तु उसमे उसको सफलता नही

ISSN 2350-109X
www.indianscholar.co.in
Indian Scholar
An International Multidisciplinary Research e-Journal

मिली। जब मुहम्मद गौरी ने(कायद्रा) गुजरात पर चढाई की। परन्तु इसमें उसे घायल हो लौटना पड़ा इसी के दुसरे वर्ष कुतुबुद्दीन ने इस हार का बदला लेने के लिए गुजरात पर चढाई की इस बार उसको सफलता मिली। ये दोनों युद्ध आबू के पास कायद्रा में लडे गये थे उसकी सेना गुजरात से नाडोल और पाली (बाली) की तरफ होती हुई गयी थी,और वहाँ के लोग उसके डर से किले खाली कर भाग गये थे।[97]

आईने अकबरी में लिखा है कि मौहम्मद गौरी ने जब राय पिथोरा की लड़ाई से फुरसत पाई, तब वह कन्नोज के राजा जयचंद से मुकाबले करने को चला गया। जयचंद हार कर भागा और गंगा में डूबकर गया। उसका भतीजा सीहा भी, जो शम्साबाद में रहता था, बहुत से आदमियों के साथ मारा गया। इसके बाद सीहा के तीन बेटे- सोनग,अश्वत्थामा और अज गुजरात की तरफ जाते हुय अपली में आकर ठहरे कुछ दिनों बाद उन्होंने गोयलो से खेड़ छीन लिया इसके बाद सोनग ने ईडर में अज ने बगलाने में अपना अधिकार जमाया । परन्तु सीहाजी का उस समय तक मारा जाना सिद्ध नही होता।[98] कर्नल जेम्स टॉड ने अपने इतिहास में सीहाजी को कही जयचंद का पुत्र,कही भतीजा और कही पौत्र तथा सेतराम का भाई लिखा है । परन्तु मारवाड़ की ख्यातो में और सीहाजी के वि.सं.1330 लेख में इन्हें सेतराम का पुत्र लिखा है।[99] मारवाड़ की ख्यातों में सीहाजी का वि.सं.1212 में मारवाड़ आना लिखा है लेकिन जब कन्नोज नरेश ही वि.सं. 1250 में मारा गया था, तब उसकी संतान का इस घटना से 35 वर्ष पूर्व मारवाड़ में आना कैसे सम्भव हो सकता है। कर्नल टॉड ने अपने ऐनाल्स एंड एक्टिविटीज ऑफ राजस्थान नामक इतिहास में सीहाजी के कन्नोज छोडकर, मारवाड़ में आने का समय वि.सं.1268/1212 ई.लिखा है।[100] जनरल कनिघम इस घटना को वि.सं.1283/ ई.सं.1226 में होना मानते है।[101]

जबकि पंडित विश्वेश्वर नाथ रेउ के अनुसार इतिहास प्रसिद्व राठौर-नरेश जयचन्द्र के मुहम्मद गौरी के हमले मारे जाने भी कनौज के आस-पास का प्रदेश उसके पुत्र हरीशचन्द्र के अधिकार में ही रहा। सम्भवतः इसी हरीशचन्द्र की उपाधि या दूसरा नाम बरदायीसेन था परन्तु वि.सं. 1243 के बाद जब मुसलमानों के आक्रमणों से हरिशचन्द्र का रहा-सहा राज्य भी जाता रहा, तब बरदायी सेन या हरिशचन्द्र का पुत्र सेतराम और सीहाजी खोर (शम्साबाद) की तरफ चले गये और कुछ दिन बाद मोधा की तरफ होते हुए महुई में जा रहे। परन्तु उक्त प्रदेश पर भी मुसलमानों का उपद्रव प्रारम्भ हो गया तब इन्हें और सेतराम को मारवाड़ की तरफ आना पड़ा और सेतराम ने अपने छोटे भाई को ही अपना दत्तक पुत्र मान लिया।[102]

ISSN 2350-109X
www.indianscholar.co.in
Indian Scholar
An International Multidisciplinary Research e-Journal

मुहम्मद गौरी और आमेर का कछवाहा राजवंश :-

कछवाहा राजा जान्हण के पुत्र पजवनराय का विवाह दिल्ली-अजमेर के यशस्वी पृथ्वीराज चौहान की चचेरी बहिन से हुआ था। जो पृथ्वीराज के चाचा कांह जी की पुत्री थी और पनवनराय चौहानों का सेनापति था उसकी वीरता का बखान पृथ्वीराज के दरबारी कवि चंदबरदाई ने अपने ग्रंथ पृथ्वीराज रासो में भी किया है। मौहम्मद गौरी के विरुद्व तराईन के युद्ध पृथ्वीराज तृतीय के साथ लड़ा जिसमे राजपूत सेनाओ ने अफगानों के दाँत खट्टे कर दिए थे जब पृथ्वीराज ने संयोगिता का अपहरण किया जयचन्द्र के साथ हुय युद्ध में पजवनराय, उसके भाईयो और दो पुत्रो ने वीर गति प्राप्त की और पजवनराय 1192 ई.के तराइन के अंतिम युद्ध में पृथ्वीराज तृतीय का साथ नही दे सका। तराइन के द्वितीय युद्ध के समय आमेर के सिंहासन पर मलयसिंह (मले-सी) थे।[103] पंजवनराय के बाद उनके बड़े पुत्र मलयसिंह जी गद्दी पर बैठे उनकी वीरता कन्नोज के युद्ध –विषयक वर्णन में पृथ्वीराज रासो में वर्णित है कन्नोज के युद्ध के घावो में मलय सिंह जो ठीक नही हुय थे इस कारण से वे पृथ्वीराज और गौरी के तराइन के दूसरे युद्ध में शरीक नही हो सके थे। तराइन के द्वितीय युद्ध में उनका छोटा भाई बलभद्र गया था जो वहा वीरतापूर्वक लड़कर काम आया था।[104]

अजमेर का मेर- विद्रोह 1196 ई. : ऐबक का सर्वोधिक संकटमय काल:-

मेर जाति के निवास के कारण अजमेर और मेवाड़ के कमलमेर के बीच के पहाड़ी क्षेत्रो का नाम मेरवाडा पड़ा। इसके उत्तर में मारवाड़ और अजमेर, दक्षिण में मेवाड़, पूर्व में अजमेर तथा पश्चिम में मारवाड़ है। इसकी स्थिति $26^0$11' व 25^0 30' 33" उ. अ. और 73^0 43' 3" पूर्व. द. के बीच है।[105] कनिंघम ने भी अजमेर के निकट मेर जाति का निवास स्थल बताया है।[106]

समकालीन इतिहासकार हसन निजामी ने इस विद्रोह कारणों और अथवा राजनीति से विभक्त इस जाति के संगठित होने के कारणों का उल्लेख नही किया गया तथापि कहा जा सकता है कि अजमेर के मुस्लिम गर्वनर के अत्याचार अथवा जबरदस्ती कर की वसूली करना इसका एक कारण अवश्य रहा होगा। और इन हत्याचारो के कारण ही ये में लोग अजमेर के आस-पास से उनकी सत्ता उखाड़ फेखना चाहते थे।[107]

इस समय मुहम्मद गौरी गजनी में, और इस विद्रोह की सूचना कुतुबुद्दीन ऐबक को ग्वालियर विजय 1196 ई. के पश्चात दिल्ली लौटने पर हुई। हसन निजामी ने मेर जाति के नेता का नाम भी नही दिया तथापि इस असंतोष के वातावरण में जाति के किसी वरिष्ट पुरुष अथवा उनके मुखिया द्वारा इसका नेतृत्व किया जाना समाचीन है। मेर-विद्रोह की व्यापक

ISSN 2350-109X
www.indianscholar.co.in
Indian Scholar
An International Multidisciplinary Research e-Journal

तैयारी की गयी और इस संघर्ष में शामिल होने के लिए मेर लोगो ने गुजरात के चालुक्यो को आमंत्रित किया। अजमेर के स्वत्रंता प्रेमी लोग भी अवश्य इस संघर्ष में शामिल हुए होंगे। चालुक्य सम्राट भीमदेव द्वितीय ने इस कार्य को उचित समझते हुये अपनी एक सेना की टुकड़ी को रवाना की। परन्तु मेर लोगो का ये दुर्भाग्य था कि उन्हें गुजरात द्वारा भेजी गयी सहायता शीघ्र प्राप्त नही हो सकी। ब्रिग्स ने फरिश्ता के अंग्रेजी अनुवाद में लिखा है कि नागौर के राजा तथा अन्य राजपूत ने भी सहायता दी थी, किन्तु डे महोदय के अनुवाद में केवल " केवल बहुत से स्वन्त्रत भारतीय राजाओ" द्वारा सहायता देने का उल्लेख है।[108]

अजमेर के मुस्लिम पदाधिकारियों ने जब अपने को इनके दमन में असमर्थन समझा तो उन्होंने ने शीघ्र दिल्ली में कुतुबुद्दीन ऐबक को इसके विषय में सूचित किया। ऐबक ने अजमेर के इस तृतीय विद्रोह की विकरालता को भांपते हुए दिल्ली से शीर्घ प्रस्थान किया प्रचंड गर्मी के महीने में मई-जून 1196 ई. में द्रुत गति से अजमेर पहुच गया और वहाँ के विद्रोहियो पर टूट पड़ा। अभी गुजरात की सैनिक सहायता मेर लोगो को प्राप्त नही हुई थी और अभी उनकी तैयारी भी पूरी नही थी। इसी बीच ऐबक का आक्रमण उनके लिए असहनीय हो गया होगा तथापि में लोग मुस्लिम सेना से प्रात: से सांयकाल तक संघर्ष करते रहे। दुसरे दिन गुजरात की सैनिक टुकड़ी उनकी सहाययार्थ आ पहुंची। फलस्वरूप उनका उत्साह बढ़ गया और वे दुगने उत्साह से मुस्लिम सेना पर प्रहार करने लगे। इस संघर्ष में अनेक मुस्लिम सेनापति मरे गये और स्वंय कुतुबुद्दीन ऐबक भी घोहयल गया। मेर लोगों के बढ़ते हुए दबाव को देख कर कुतुबुद्दीन ऐबक ने समस्त सेना के साथ अजमेर के दुर्ग में शरण ली। और मेर लोगो ने भी उनका पीछा करके एक फरसंग की दुरी पर अपना शिविर लगा दिया।[109]

हसन निजामी ने मेर लोगो द्वारा किले को लम्बे समय तक घेरे रहने तक के बावजूद उनकी कार्यवाहियों का उल्लेख नही किया। प्रतीत होता है कि उनकी योजना किले को लम्बे समय तक घेर कर मुस्लिम मुसलमानों द्वारा आत्मसमर्पण कवने की रही होंगी। कुतुबुद्दीन ऐबक के जीवन का यह सबसे कठिन समय था, जब वह स्वंय मेर लोगों से पराजित हो गया था। और किले में घिरे रहने से उसका बुरा हाल हो रहा था। उसने अपने एक विश्वस्त व्यक्ति को अपने स्वामी मुहम्मद गौरी के पास गजनी भेजा तथा अपनी परिस्थितियों से अवगत कराया। मुहम्मद गौरी ने स्थिति की गम्भीरता को देखते हुए जहाँ पहनवान असदुद्दीन, अर्सलान कालिज, नसीरुद्दीन हुसेन, इजुद्दीन तथा शरफुद्दीन मुहम्मद जराह के नेतृत्व में गजनी से एक सेना ऐबक की सहायतार्थ रवाना की। शरद ऋतू अक्टूबर –नवम्बर, 1196 ई. में इस सेना के अजमेर में पहुचं जाने से मेर-विद्रोह का दबाव कम हुआ और अंततः 5 महीने के अपार कष्ट के बाद कुतुबुद्दीन ऐबक के जीवन का कठिनटम संकट समाप्त हो गया।[110]

यघपि अजमेर के मेर लोग अपने उदेश्य में असफल हो गये और गजनी की सहायता से ऐबक ने उनके विद्रोह को कुचल दिया तथापि आगे कुछ समय तक यहाँ के लोग सक्रिय बने रहे क्योंकि हम इल्तुतमिस[111]की विजय में अजमेर

ISSN 2350-109X
www.indianscholar.co.in
Indian Scholar
An International Multidisciplinary Research e-Journal

का नाम पाते है। इतना होने पर भी मेर विद्रोह को गौर आक्रमणकारियो के विरूद्व भारतीय जनता का सबसे बड़ा जन विद्रोह होने का गौरव प्राप्त है।[112]

मुहम्मद गौरी और उसके सेनापतियों के नेतृत्व में हुए भारतीय अभियानों का फल यह हुआ कि महमूद गजनवी द्वारा स्थापित हिन्दू और मुस्लिम साम्राज्य की सीमा रावी नदी से हटकर ब्रहा पुत्र की घाटी तक पहुँचीं। इस बीच के समस्त भू-भाग को उन्होंने स्थायी न सही, आंधी की भांति ही, झनजोर अवश्य दिया और लाहौर में स्थापित नया राजवंश कालान्तर में इन्ही भू-भागों पर अपना स्थायी अधिकार स्थापित करने के लिये प्रयत्नशील हो गये।

रावी के तट से ब्रह्मापुत्र की घाटी तक मुस्लिम साम्राज्य को विस्तारित करने वालों को भी कायद्रा एंव तराइन के प्रथम युद्व में शर्मनाक पराजय झेलनी पड़ीं थी। इसके पश्चात भी तराइन, दिल्ली, मेरठ, बरन, कोल, चन्दवार, अजमेर, रणथम्भौर, जालौर, जैसलमेर,बयाना, ग्वालियर, कालिंजर, बदायूं,हांसी आदि में उनको प्रबल विरोध का सामना करना पड़ा। हांसी, दिल्ली, अजमेर, में मुहम्मद गौरी के विरूद्व पुन: विद्रोह स्पष्ट करता है कि विजित प्रान्तों में भी आसानी से विदेशी जुये को बर्दाश्त करने वाले नही थे। यही अनेक राज्यों ने तो अल्पकाल में ही विदेशी जुए को उतार फेंका।

खलीक अहमद निजामी का मत है :

" यदि भारतीय जनता ने भारत में तुर्की शासन की स्थापना का प्रतिरोध किया होता तो गौरवंशी भारतीय क्षेत्र में एक इंच भी भूमि नही जीत सकते थे।[113]

मोटे रूप से निजामी महोदय का उपयुक्त मत सही हो सकता है किन्तु सूक्ष्म रूप से यह सत्य के बिल्कुल समीप नही है। यदि हम भारतीय प्रदेशों में किये गये समस्त मुस्लिम आक्रमणों अरबों तथा तुर्कों को देखें तो यह स्पष्ट होता है कि भारतीय जनता ने छिट-पुट अवश्य ही प्रतिरोध किया था मुहम्मद गौरी को अनेक बार स्थानीय मेर और राजपूत जाति से संघर्ष करना पड़ा। मुहम्मद गौरी के आक्रमण के समय हांसी में जटवान एंव कोल में स्थानीय जाति का विद्रोह उल्लेखनीय है। अजमेर का मेर विद्रोह (1196 ई.) तो निजामी महोदय के मत को पूर्णरूपेण न सही, आंशिक रूप में ही खंडित कर देता है। मेर विद्रोह भारतीय सामान्य जनता का विद्रोह था। प्रारम्भिक मुस्लिम आक्रमणकारियों अथवा भारत में तुर्की शासन में की स्थापना करने वालों के विरूद्व भारतीय जनता द्वारा किये गये सबसे बड़े एंव व्यापक विद्रोह के रूप में इसे स्वीकार करना चाहिये

संदर्भ ग्रन्थसूची

1. एम.एस.अहलुवालिया,मुस्लिम एक्सपेंसन इन राजस्थान, (देहली,1978).
2. स्ट्रगल फॉर अम्पायर, पृ.117.
3. रैवटी, खंड 1,पृ. 449.

4. डे, खंड 1, पृ.36; के.के.बसु, तारीखे मुबारक शाही, अनु.(बड़ोदा,1932), पृ. 6; रैकिग, खंड 1,पृ.66; ब्रिग्स,खंड 1,पृ. 95.
5. डॉ.दशरथ शर्मा, राजस्थान थ्रू अगेस, वोलुम 1, पृ.253.
6. पंडित हरिदत्त गोविन्द व्यास, जैसलमेर का इतिहास,पृ. 33-35.
7. डॉ.नारायण सिंह भाटी, जैसलमेर री ख्यात, पृ.17.
8. आर.वी.सोमानी,हिस्ट्री ऑफ़ जैसलमेर, पृ. 25-26.
9. हिस्ट्री ऑफ मुहम्मद पॉवर इन इंडिया, पृ.169. एलटी.कॉल.जॉन ब्रिग्स.
10. हरिसिंह भाटी, गजनी से जैसलमेर, पृ. 19-20
11. डॉ. हरिबल्लभ माहेश्वरी, जैसलमेर का इतिहास, पृ.18-21.
12. मांगीलाल मयंक, जैसलमेर राज्य का इतिहास, पृ.46-47.
13. आर.वी.सोमानी, हिस्ट्री ऑफ जेसलमेर,पृ. 22-24.
14. डॉ. दशरथ शर्मा, राजस्थान थ्रो अगेस,पृ. 259.
15. वी.डी. महाजन , मुस्लिम रूलस इन इंडिया ,पृ.67.
16. हरिसिंह भाटी, गजनी से जैसलमेर,पृ. 214-219.
17. गौरीशंकर हीराचंद ओझा,सिरोही राज्य का इतिहास,(अजमेर,1911)पृ.36
18. रैवटी, खंड1, पृष्ट451-452.
19. हरविलास शारदा,पृथ्वीराज विजय (अजमेर,1935.)पृ. 23-24;
20. शिवदत्त शर्मा, ''पृथ्वीराज विजय''नागर प्रचारिणी प्रत्रिका नवीन सं. भाग, 5 सं. 1981, पृ. 177-178.
21. पृथ्वीराज विजय,सर्ग 1,श्लोक,50.
22. प्रोग्रेस रिपोर्ट ऑफ द आर्कोलोजिकल सर्व ऑफ इंडिया (वेस्टर्न सर्किल),1906-07,पृ. 41-42;मांगीलाल व्यास 'मंयक' राजस्थान के अभिलेख,(जोधपुर,1980),क्रम सं 109, पृ.38.
23. रैवटी,खंड1,पृ.451; डे,खंड1,पृ.36; रैकिंग,खंड 1,पृ.66; ब्रिग्स,खंड1,पृ.95.
24. भीमदेव द्वितीय का अहाड़ ताम्रभिलेख(सं.1263) पंक्ति 9-10; सोमेश्वर कृत किर्तिकौमुदी,द्वितीय सर्ग श्लोक 115.
25. ताजुल मासिर,इलियट,खंड2,पृ.167.
26. हिस्ट्री ऑफ परमार डाइनेस्ट्री,पृ.313; ओझा.सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 36.
27. मेरुतुग गापार्यकृत प्रबंध चिंतामणि ,प्रथम भाग (शांति निकेतन 1933), पृ. 97.
28. रैवटी खंड 1,पृ. 452-453; द स्ट्रगल फॉर अम्पायर, पृ.117; दिल्ली सल्तनत,खंड 1पृ.136.
29. रैवटी खंड 1,पृ.453-456.
30. Lt. Col. John Briggs. History of Rise of Mohammedan Power in India p.169
31. तबकात-ए-नासिरी, पृ.449-451; तारीख-ए-फरिश्ता, भा.1, पृ. 169; इलियट, भा. पृ.294-295; डॉ. दशरथ शर्मा, दि अर्ली चौहान डाइनेस्टिज, पृ.186.
32. टॉड,राजस्थान भाग 2, पृ.958.

33. हम्मीर महाकाव्य,सर्ग 3, श्लो.1-149; डॉ.दशरथ शर्मा, दि अर्ली चौहान डाइनेस्टिज, पृ.161.
34. सिंधवी जैन ग्रन्थमाला, भा.2, पृ.87; डॉ.दशरथ शर्मा, दि अर्ली चौहान डाइनेस्टिज, पृ.187.
35. वही, भा.6 पृ.117; डॉ.दशरथ शर्मा, दि अर्ली चौहान डाइनेस्टिज, पृ.187.
36. सुर्जन चरित्र, 10, पृ. 119-132; डॉ.दशरथ शर्मा, दि अर्ली चौहान डाइनेस्टिज, पृ. 187.
37. प्रबंध चिंतामणि, पृ. 189 - 190; डॉ. दशरथ शर्मा, दि अर्ली चौहान डाइनेस्टिज, पृ.187.
38. एच.जी.रैवटीखंड 1,पृ.457-458; सी.एच.आई.,खंड3 पृ.40;
39. एच.जी.रैवटी खंड 1,पृ.457-458
40. दिल्ली सल्तनत,खंड1,पृ. 137,164;द स्ट्रगल फॉर अम्पायर,पृ.109,115.
41. तबकाते नासिरी पृ.118 ; एच.जी.रैवटी,खंड 1 पृ.459-460;
42. फरिश्ता,s ब्रिग्स,खंड 1, पृ.97
43. हुसेन,खंड 1, पृ.142.
44. दिल्ली के तोमर शासक,पृ.52,155-156.
45. ठक्कुरफेरु कृत रतनपरीक्षादी सप्त ग्रन्थ संग्रह (जोधपुर 1960) पृष्ट 31.
46. डॉ.ए.एल.श्रीवास्तव, दिल्ली सल्तनत,पृ.76.
47. जी.एच.रैवटी खंड 1,पृ. 458-459.
48. ए.एस.आई.,खंड 14,पृ.68-69. दिल्ली सल्तनत, खंड १,पृ.164-165.
49. ई.सी.डी.,पृष्ट ९१;द स्ट्रगल फॉर अम्पायर,पृष्ट.110.
50. मिन्हाज ,जी.एस.रेवटी,खंड 1,पृ.459.
51. जी.एस.रैवटी,खंड1,पृ.466-467.
52. हम्मीर महाकाव्य,सर्ग,3, शलोक 47-49; गोपीनाथ शर्मा,राजस्थान का इतिहास,पृ.168; दिल्ली के तोमर,पृ.285 .
53. फरिश्ता,ब्रिग्स,खंड,1 पृ.97 , जी.एस.रैवटी,खंड 1,पृ.461-464;
54. गोपीनाथ शर्मा,राजस्थान का इतिहास,पृ.168.
55. दशरथ शर्मा,राजस्थान थ्रू द आगेस,पृ.297.
56. जी.एस.रैवटी,खंड 1, पृ.464.
57. तबकाते नासिरी,पृ.119.
58. जी.एस.रैवटी,खंड1,पृ.466-467.
59. हम्मीर महाकाव्य,सर्ग,3, शलोक 47-49; गोपीनाथ शर्मा,राजस्थान का इतिहास,पृ.168; दिल्ली के तोमर,पृ.285.
60. गोपीनाथ शर्मा,राजस्थान का इतिहास,पृ.169.
61. विरूद्व-विधि-विघ्वंश,शलोक 23;आई.एच.क्यू.सितेम्बर,1940
62. ताजुल मासिर ,इलियट,खंड 2 ,पृ 156 -157; वही,पृ.157;

63. हम्मीर महाकाव्य,सर्ग 3 ,शलोक,49-73 ;पृथ्वीराज रासो,पृ.216-226 ; तबकात-ए –नासिरी भा.1,पृ.464;राजस्थान थ्रू द अगेस , पृ. 297.
64. फरिश्ता,ब्रिग्स,खंड 1 ,पृ.99-100.
65. खलिक अहमद निजामी,दिल्ली सल्तनत,खंड 1 ,पृ.140.
66. जामी-उल-हिकायत,इलियट,खंड 2 पृ.147.
67. जामी-उल-हिकायत,इलियट,खंड 2,पृ.147.
68. विरूद्व-विधि-विघ्वंश,शलोक 23,आई.एच.क्यू.,सितम्बर,पृ.571;पुरातन प्रबंध संग्रह,पृ87;प्रबंध चिंतामणि पृ.117.
69. तबकात-ए-नासिरी,भा.1 पृ.466;फरिश्ता, भा.1 पृ.176.
70. जामी-उल-हिकायत,इलियट,खंड 2 पृ.147.
71. रैवटी, खंड,1 पृ.468-469.
72. तबकात-ए-नासिरी,भा.1 पृ.466;फरिश्ता, भा.1 पृ.176.
73. जी.एस.रैवटी,खंड 1,पृ.468-469.
74. ताजुलमसीर,इलियट,खंड 2,पृ.157.
75. ताजुल मआसिर, इलियट, खंड 2 ,पृ.160; पृथ्वीराज विजय,ना.प्र.प.(न.सं.),भाग 5, सं.1981,पृ.171; हम्मीर महा काव्यम,सर्ग, 4,शलोक, 2; आन्युअल रिपोर्ट ऑफ़ द राजपुताना म्यूजियम अजमेर,1912 -13, पृष्ट 2,5.
76. हम्मीर महा काव्यम,सर्ग, 4,शलोक 2.
77. ताजुल मआसिर, इलियट, खंड 2 ,पृ.160.
78. ताजुल मआसिर, इलियट, खंड 2 ,पृ.160;एफ.एम.आर.आई. पृ.63 , 65,
79. दिल्ली सल्तनत, खंड 1, पृष्ट 142.
80. हम्मीर महाकाव्य,सर्ग 7,श्लोक 159.
81. ताजुल मआसिर, इलियट,खंड ,2,पृष्ट 160.
82. दिल्ली सल्तनत,खंड 1,पृ.142.
83. हम्मीर महाकाव्य,सर्ग 4,श्लोक 2.
84. आन्युअल रिपोर्ट ऑफ़ राजपुताना म्यूजियम,अजमेर,1912-13, पृ. 2,5.
85. ताजुल मआसिर, इलियट, खंड 2 ,पृ.160.
86. जावेद अनवर, ए हिस्ट्री ऑफ़ रणथम्भौर, पृ. 16-18.
87. हसन निजामी, वही पृष्ट 164
88. फरिश्ता, ब्रिग्स,खंड 1,पृष्ट 109,जी.एस.रैवटी(तबकातनासिरी) खंड 1 पृष्ट 519.
89. ताजुल मआसिर, इलियट, खंड 2 ,पृ.163-164.
90. ताजुल मआसिर, इलियट, खंड 2 ,पृ.164.
91. हम्मीर महाकाव्य,सर्ग4,शलोक 16-19.

92. हरिहर निवास द्विवेदी, दिल्ली के तोमर,पृष्ट302; हरिहरनिवास द्विवेदी, ग्वालियर के तोमर,(ग्वालियर1976) पृष्ट 2.
93. ताजुल मआसिर, इलियट, खंड 2 ,पृ.164; दशरथ शर्मा,"द खर-तरगच्छापट्टावली कम्पाइलड़ बाइ जिनपाल ई.टी.सी." आई .एच.क्यू,दिसम्बर 1935,पृ.780,
94. एस.ए.आई.,तिरमिजी,अजमेर थ्रू इन्स्क्रप्सस (न्यू देहली),भूमिका पृष्ट 11.
95. हरविलास शरदा, हिस्टोरिकल एंड डीस्क्रप्ति व,पृ.50-51.
96. तबकाते नासिरी (इलियट हिस्ट्री ऑफ़ इंडिया] भा.2 पृ. 276.
97. पंडित विशवेशर नाथ,मारवाड़ इतिहास,पृ.13-14.
98. आईने-अकबरी, भाग 2, पृ.506.
99. ऐनाल्स एंड एक्टिविटीज ऑफ राजस्थान, भा.1 पृ.105; भा.2, पृ.30 और भा.2 पृ.640.
100. टॉड,ऐनाल्स एंड एक्टिविटीज ऑफ राजस्थान भा.2 पृ.640.
101. कनिघम की आर्कियोलॉजिकल सर्व रिपोर्ट,भा.11,पृ.123.
102. पंडित विश्वेश्वर नाथ रेउ, मारवाड़ का इतिहास, पृ. 31-32.
103. चंद्रमणि सिंह, जयपुर राज्य का इतिहास पृ.10-11.
104. देवीसिंह मंडाना, कछवाहा का इतिहास,पृ.9-11.
105. अजमेर हिस्टिरिकल एंड डिस्क्रीप्तिव,पृष्ट 416.
106. ए.एस.आई.खंड 6, पृष्ट 8.
107. अशोक कुमार सिंह,अजमेर का मेर विद्रोह और उसका ऐतिहासिक महत्व, शोध-प्रत्रिका,वर्ष 34,अंक 3-4, पृष्ट 34-42.
108. ताजुल मआसिर,इलियट, खंड 2,पृष्ट 166; फरिश्ता, ब्रिग्स,खंड 1, पृष्ट 110. तबकात नासिरी,जी.एस. रैवटी,खंड 1,पृष्ट 520.
109. ताजुल मआसिर,इलियट, खंड 2,पृष्ट 166.
110. ताजुल मआसिर,इलियट, खंड 2,पृष्ट 166-168.
111. जी.एस.रैवटी,तबकात नासिरी,खंड 1,पृष्ट 627.
112. अशोक कुमार सिंह,अजमेर का में विद्रोह, शोध-प्रत्रिका, वर्ष 34, अंक 3-4, पृष्ट 43.
113. खलीक अहमद निजामी,सम आसपेक्ट्स रिलिजन एंड पॉलिटिक्स इन इण्डिया डयुरिग द थर्टीज सेंचुरी,पृ.80